ISSN: ISSN: 2583-5149 | Special Edition Vol. 2 | March 2026

गीता और मानसिक स्वास्थ्य: एक अंतर्विषयक अध्ययन

डॉ. छाया
सहायक प्राध्यापिका (हिंदी विभाग)
निरंकारी बाबा गुरबचन सिंह मेमोरियल महाविद्यालय, सोहना

सारांश

आधुनिक समाज में तीव्र प्रतिस्पर्धा, भौतिकता और तकनीकी विकास के बीच मानव-मन तनाव, चिंता, अवसाद तथा भावनात्मक अस्थिरता जैसी गंभीर समस्याओं से जूझ रहा है। इस संदर्भ में श्रीमद्भगवद्गीता का अध्ययन विशेष रूप से प्रासंगिक प्रतीत होता है। गीता का उपदेश स्वयं एक गहन मानसिक संकट की स्थिति में दिया गया है, जहाँ अर्जुन विषाद, भ्रम और निर्णय-असमर्थता से ग्रस्त दिखाई देता है। यह स्थिति आधुनिक मनोविज्ञान में वर्णित मानसिक विकारों से समानता रखती है।

गीता केवल एक धार्मिक या दार्शनिक ग्रंथ नहीं, बल्कि मानव-मन की जटिलताओं को समझने और उनका समाधान प्रस्तुत करने वाला एक व्यावहारिक मनोवैज्ञानिक ग्रंथ है। कर्मयोग का सिद्धांत फल-आसक्ति के त्याग के माध्यम से तनाव और चिंता को कम करने का मार्ग दिखाता है, जबकि 'स्थितप्रज्ञ' की अवधारणा मानसिक संतुलन, आत्मसंयम और भावनात्मक स्थिरता का आदर्श प्रस्तुत करती है। आत्मज्ञान भय, असुरक्षा और मृत्यु की चिंता से मुक्ति प्रदान करता है तथा भक्ति व्यक्ति को मानसिक संबल और आंतरिक शांति प्रदान करती है।

श्रीमद्भगवद्गीता के सिद्धांत आधुनिक मानसिक स्वास्थ्य, तनाव-प्रबंधन और जीवन-संतुलन के संदर्भ में अत्यंत उपयोगी हैं। गीता को यदि केवल धार्मिक ग्रंथ के रूप में न देखकर एक समग्र मानसिक

स्वास्थ्य-मार्गदर्शक के रूप में समझा जाए, तो यह आज के तनावग्रस्त समाज के लिए सार्थक और व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत कर सकती है।

मुख्य शब्द : श्रीमद्भगवद्गीता, मानसिक स्वास्थ्य, कर्मयोग, स्थितप्रज्ञ, आत्मज्ञान, तनाव

प्रस्तावना

निश्चय ही वर्तमान वैश्विक समाज तीव्र भौतिकता, उपभोक्तावाद, प्रतिस्पर्धा, असुरक्षा तथा निरंतर तनाव के दबाव में मानसिक स्वास्थ्य की गम्भीर समस्याओं से ग्रस्त होता जा रहा है। अवसाद, चिन्ता, अकेलापन, आत्महीनता, क्रोध, निराशा एवं अस्तित्वगत संकट आज मनुष्य के आन्तरिक जीवन को विचलित कर रहे हैं, जिस कारण व्यक्ति बाह्य रूप से समृद्ध होते हुए भी आन्तरिक शान्ति से वंचित दिखाई देता है। ऐसे विषम मानसिक परिवेश में श्रीमद्भगवद्गीता एक कालजयी, सार्वकालिक एवं मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अत्यन्त प्रासंगिक ग्रन्थ के रूप में प्रतिष्ठित होती है। गीता मानव-मन की स्थिति को केन्द्र में रखकर कर्तव्य, विवेक, समत्व, आत्मसंयम तथा आत्मबोध का मार्ग प्रशस्त करती है। अर्जुन का विषाद वस्तुतः आधुनिक मनुष्य की मानसिक अवस्था का प्रतीक है, जहाँ मोह, भय, दायित्व-बोध और नैतिक संकट एक साथ उपस्थित हैं।

श्रीकृष्ण द्वारा प्रतिपादित निष्काम कर्मयोग, स्थितप्रज्ञता, समत्वभाव मानसिक संतुलन की आधारशिला स्थापित करते हैं। गीता यह शिक्षा देती है कि मन को विषयासक्ति से मुक्त कर विवेकयुक्त कर्म में प्रवृत्त करना ही मानसिक स्वास्थ्य का स्थायी उपाय है। “योगः कर्मसु कौशलम्” तथा “समत्वं योग उच्यते” जैसे सिद्धान्त आज के तनावग्रस्त समाज को आत्मनियंत्रण, भावनात्मक स्थिरता और आन्तरिक शान्ति प्रदान करने में सक्षम हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि श्रीमद्भगवद्गीता केवल एक धार्मिक ग्रन्थ न होकर मानसिक स्वास्थ्य की दृष्टि से एक व्यवहारिक, दार्शनिक एवं चिकित्सात्मक मार्गदर्शिका के रूप में वर्तमान समाज के लिए अत्यन्त प्रासंगिक है।

इस शोध-पत्र में श्रीमद्भगवद्गीता के चयनित श्लोकों के माध्यम से मानसिक स्वास्थ्य की अवधारणा का विश्लेषण किया गया है। मानसिक स्वास्थ्य मानव जीवन का एक अनिवार्य पक्ष है। केवल शारीरिक स्वास्थ्य ही नहीं, बल्कि मानसिक संतुलन, भावनात्मक स्थिरता और सकारात्मक दृष्टिकोण भी जीवन

की गुणवत्ता निर्धारित करते हैं। भारतीय दर्शन में श्रीमद्भगवद्गीता एक ऐसा ग्रंथ है, जो मानव की आंतरिक समस्याओं–शोक, भय, मोह, क्रोध, चिंता–का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है। गीता का उपदेश युद्धभूमि में मानसिक रूप से विचलित अर्जुन को दिया गया, जो इसे मानसिक संकट-प्रबंधन का अद्वितीय ग्रंथ बनाता है।

जिस प्रकार पर्यावरण को सुरक्षित रखने से हमारा शरीर भी स्वस्थ रहता है। उसी प्रकार हमारे मन में भरे हुए प्रदूषक, जिनमें काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, जलन आदि को दूर करना भी अत्यंत आवश्यक है। विशेष रूप से हमारे नकारात्मक विचार ही अनेक रोगों का कारण बनते हैं।

1. **"योगास्त्रयो मया प्रोक्ता नृणां श्रेयो विधित्सया।**
   ज्ञानं कर्म च भक्तिश्च नोपायोऽन्योऽस्ति कुत्रचित्"॥1.

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि मानव जीवन की आध्यात्मिक उन्नति और मोक्ष के लिए केवल तीन ही प्रमाणिक मार्ग हैं–ज्ञान, कर्म और भक्ति। इनके अलावा कोई चौथा या भिन्न मार्ग कहीं भी स्वीकार्य नहीं है। अतः मानसिक स्वास्थ्य को ठीक रखने और भौतिक कष्टों के निवारण हेतु श्रीमद्भगवद्गीता का त्रियोग सिद्धांत अत्यंत महत्वपूर्ण है।

2.अर्जुन की मानसिक व्यथा

"गाण्डीवं स्रंसते हस्तात् त्वक्चैव परिदह्यते।

न च शक्नोम्यवस्थातुं भ्रमतीव च मे मनः"॥2.

कुरुक्षेत्र के मैदान में जब अर्जुन अपने परिजनों को सामने देखकर मोहग्रस्त हो जाते हैं, तब अर्जुन अपने विषाद का वर्णन करते हुए कहते हैं कि मेरे हाथ से गांडीव धनुष गिर रहा है और मेरी त्वचा बहुत जल रही है, मैं स्थिर खड़ा रहने में भी असमर्थ हूँ, और मेरा मन भ्रमित हो रहा है। यह श्लोक मानसिक तनाव, भय और अस्थिरता को दर्शाता है।

3. शोक और मोह से ग्रस्त मन

"कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः
पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढचेताः।
यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्"॥3.

अर्जुन श्रीकृष्ण से मार्गदर्शन मांगते हुए कहते हैं कि मैं कायरता के दोष से ग्रस्त हो गया हूँ और मेरा कर्तव्य नष्ट हो गया है। मेरा मन धर्म के विषय में पूरी तरह से भ्रमित है। इसलिए मैं आपसे पूछता हूँ, मेरे लिए निश्चित रूप से जो कल्याणकारी हो वह मुझे बताइए। मैं आपका शिष्य हूँ, आपकी शरण में आया हूँ, इसलिए मुझे शिक्षा दें।

4. शोक का कारण – अज्ञान

"अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे।

गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पण्डिताः"॥4.

श्रीकृष्ण अर्जुन के शोक को तर्कसंगत नहीं मानते हैं, वे कहते हैं कि अर्जुन पांडित्यपूर्ण बातें कर रहे हैं। पंडित या विद्वान वही होता है जो शरीर और आत्मा के रहस्य को समझता है। वे जानते हैं कि शरीर नश्वर है, जबकि आत्मा अमर और नित्य है। जो ज्ञानी पुरुष होते हैं, वे जीवन और मृत्यु के रहस्य को पूरी तरह समझते हैं। इसलिए वे न तो मृत व्यक्तियों के लिए और न ही जीवित व्यक्तियों के लिए शोक करते हैं, क्योंकि वे जानते हैं की आत्मा का अस्तित्व बना रहता है। विद्वान पुरुष परिस्थितियों की द्वैतता से ऊपर उठकर केवल अपने कर्तव्यों का पालन करते हैं। अतः तुम उन बातों के लिए शोक कर रहे हो, जिनके लिए शोक करना उचित नहीं, क्योंकि मानसिक पीड़ा का मूल अज्ञान ही है।

5. समभाव ही मानसिक स्वास्थ्य

"योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।

सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते"॥5.

योग में स्थित होकर अर्थात ईश्वर को समर्पित होकर अपने कर्म करो। हे अर्जुन, सभी प्रकार की आसक्ति को छोड़कर, सफलता और असफलता में समान भाव रखते हुए योग में स्थित होकर अपने कर्तव्य कर्म को करो। इसी समता या समान भाव को ही योग कहा जाता है।

6. स्थिर बुद्धि वाले व्यक्ति की मानसिक अवस्था

"दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः।

वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते"॥6.

इस श्लोक में भगवान् श्रीकृष्ण ने एक स्थिर बुद्धि वाले व्यक्ति के लक्षण बताए हैं कि दुखों की प्राप्ति

होने पर जिसके मन में परेशानी नहीं होती, सुखों की प्राप्ति में जो सर्वथा इच्छा रहित है। जिसके आसक्ति, भय और क्रोध पूरी तरह नष्ट हो गए हैं, ऐसा मननशील मनुष्य स्थितप्रज्ञ कहलाता है। अतः यह अवस्था मन के पूर्ण नियंत्रण का प्रतीक है।

7. इंद्रियों और मन पर नियंत्रण

"यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः।

इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता"॥7.

यह श्लोक इन्द्रिय संयम के महत्व को बताता है कि जब कोई व्यक्ति अपनी इन्द्रियों को उनके विषयों से उसी प्रकार हटा लेता है जैसे, एक कछुआ खतरे को महसूस करके अपने अंगों को अपने खोल के भीतर पूरी तरह समेट लेता है। उस समय उसकी बुद्धि स्थिर हो जाती है अर्थात् वह व्यक्ति आत्मज्ञान में स्थित हो जाता है।

8. ध्यान से मानसिक शांति

"उद्धरेदात्मनाऽत्मानं नात्मानमवसादयेत्।

आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः"॥8.

मनुष्य को अपने आप से अपना उद्धार करना चाहिए। अपने आपको कभी भी निराशा या पतन की ओर नहीं ले जाना चाहिए, क्योंकि यह मन अर्थात आत्मा ही मनुष्य का सबसे प्रिय मित्र है और यह मन ही मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु भी है। अतः यहाँ स्व-प्रबंधन और आत्मचिकित्सा का मूल सिद्धांत दिया गया है

9. अशांत मन का समाधान

"बन्धुरात्माऽऽत्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना जितः।

अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत्"॥9.

जिस व्यक्ति ने अपने मन को स्वयं द्वारा जीत लिया, उस जीवात्मा का वह मन स्वयं ही मित्र होता है, लेकिन जिसने मन और इन्द्रियों सहित शरीर को नहीं जीता है, उसके लिए वही मन शत्रु के समान शत्रुता का व्यवहार करता है अर्थात जिसने मन को जीत लिया, उसका मन मित्र है; अन्यथा वही शत्रु बन जाता है।

10. परम मानसिक शांति

"प्रशान्तमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम्।

उपैति शान्तरजसं ब्रह्मभूतमकल्मषम्"॥10.

श्रीकृष्ण कहते हैं कि जिस योगी का मन पूर्ण रूप से शांत है, जिसके रजोगुण यानि वासनाएं शांत हो गए हैं, जो निष्पाप हो गया है और ईश्वर के साथ एकाकार हो गया है। वह निश्चित रूप से मोक्ष का आनंद प्राप्त करता है।

11. चिंता का पूर्ण समाधान

"सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।

अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः"॥11.

इस श्लोक में भगवान श्री कृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि सभी प्रकार के सांसारिक कर्तव्यों और धर्मों को छोड़कर केवल उनकी भक्ति और शरण में आ जाना चाहिए अर्थात भगवान आश्वासन देते हैं कि जो व्यक्ति पूरी तरह से उनकी शरण में आ जाता है, उसे वे सभी पापों व परिणामों से मुक्त कर देते हैं। इसलिए मनुष्य को निश्चिन्त होकर स्वयं को भगवान् के प्रति समर्पित कर देना चाहिए।

गीता और आधुनिक मनोचिकित्सा

श्रीमद्भगवद्गीता और आधुनिक मनोचिकित्सा के मध्य एक गहन वैचारिक साम्य दृष्टिगोचर होता है, यद्यपि दोनों की पद्धतियाँ भिन्न प्रतीत होती हैं। आधुनिक मनोचिकित्सा जहाँ वैज्ञानिक परीक्षण, व्यवहारात्मक विश्लेषण तथा उपचारात्मक तकनीकों के माध्यम से मानसिक विकारों के निराकरण का प्रयास करती है, वहीं गीता मानव-मन के सूक्ष्मतम स्तरों का दार्शनिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक विवेचन प्रस्तुत करती है। गीता में वर्णित *मन*, *बुद्धि* और *अहंकार* की त्रिविध संरचना आधुनिक मनोविज्ञान की *कॉग्निशन*, *इमोशन* और *ईगो* की अवधारणाओं से साम्य रखती है। श्रीकृष्ण द्वारा प्रतिपादित मनोनिग्रह, आत्मसंयम तथा विवेकबुद्धि का विकास आज की *कॉग्निटिव बिहेवियरल थैरेपी* की मूल भावना से निकटता रखता है, जिसमें नकारात्मक विचार-प्रणालियों को पहचानकर उन्हें संतुलित एवं युक्तिसंगत दृष्टिकोण से प्रतिस्थापित किया जाता है।

गीता का *निष्काम कर्मयोग* आधुनिक मनोचिकित्सा में वर्णित *वर्क थैरेपी* एवं *माइंडफुलनेस* की अवधारणा से सम्बद्ध है, जहाँ व्यक्ति फलासक्ति से मुक्त होकर वर्तमान क्षण में सजग रहकर कर्म करता है। *स्थितप्रज्ञ* की संकल्पना भावनात्मक स्थिरता का आदर्श प्रस्तुत करती है, जो अवसाद, चिन्ता एवं तनाव के उपचार में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होती है। इसके अतिरिक्त, आत्मबोध एवं आत्मस्वीकृति का गीता-दर्शन आधुनिक *ह्यूमनिस्टिक साइकोलॉजी* के आत्म-साक्षात्कार के सिद्धान्त से साम्य स्थापित करता है। इस प्रकार गीता और आधुनिक मनोचिकित्सा परस्पर विरोधी न होकर एक-दूसरे की पूरक हैं, जहाँ गीता मानसिक स्वास्थ्य के लिए नैतिक-आध्यात्मिक आधार प्रदान करती है और मनोचिकित्सा उसे वैज्ञानिक एवं चिकित्सात्मक रूप में व्यवहार में लाती है।

निष्कर्ष

अतः यह स्पष्ट होता है कि *श्रीमद्भगवद्गीता* और आधुनिक मनोचिकित्सा मानसिक स्वास्थ्य की दिशा में भिन्न पद्धतियों के होते हुए भी समान लक्ष्य की ओर उन्मुख हैं। गीता जहाँ मन के नैतिक, दार्शनिक एवं आध्यात्मिक पक्ष को सुदृढ़ करती है, वहीं आधुनिक मनोचिकित्सा वैज्ञानिक एवं चिकित्सकीय उपायों द्वारा मानसिक विकारों के उपचार को संभव बनाती है। निष्काम कर्म, मनोनिग्रह, विवेकबुद्धि एवं स्थितप्रज्ञता जैसी गीता की अवधारणाएँ आज के तनावग्रस्त जीवन में मानसिक संतुलन एवं भावनात्मक स्थिरता प्रदान करने में अत्यंत उपयोगी सिद्ध होती हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि गीता और आधुनिक मनोचिकित्सा का समन्वय मानसिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में एक प्रभावी, समग्र एवं मानव-केंद्रित दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है।

सन्दर्भ सूची

1.श्रीमद्भागवद् महापुराण. अध्याय 11,स्कंध 11, श्लोक 6

2.श्रीमद्भगवद्गीता. गीताप्रेस, गोरखपुर, अध्याय 1 , श्लोक 30 , पृ. 16

3.श्रीमद्भगवद्गीता. गीताप्रेस, गोरखपुर, अध्याय 2 , श्लोक 7 , पृ.34

4.श्रीमद्भगवद्गीता. गीताप्रेस, गोरखपुर, अध्याय 2 , श्लोक 11 , पृ.35

5.श्रीमद्भगवद्गीता. गीताप्रेस, गोरखपुर, अध्याय 2, श्लोक 48, पृ.48

6.श्रीमद्भगवद्गीता. गीताप्रेस, गोरखपुर, अध्याय 2, श्लोक 56, पृ.38

7.श्रीमद्भगवद्गीता. गीताप्रेस, गोरखपुर, अध्याय 2, श्लोक 58, पृ.38

8.श्रीमद्भगवद्गीता. गीताप्रेस, गोरखपुर, अध्याय 6, श्लोक 5, पृ.126

9.श्रीमद्भगवद्गीता. गीताप्रेस, गोरखपुर, अध्याय 6, श्लोक 6, पृ.126

10. *श्रीमद्भगवद्गीता.* गीताप्रेस, गोरखपुर, अध्याय 6, श्लोक 27, पृ.127

11.श्रीमद्भगवद्गीता. गीताप्रेस, गोरखपुर, अध्याय 18, श्लोक 66, पृ.358